International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

गांधी चिन्तन में दार्शनिक अराजकताः एक समग्र मूल्यांकन

डॉ0 दुलारी राम मीना

सह–आचार्य (राजनीति विज्ञान)

राजकीय महाविद्यालय खण्डार,स0मा0 (राज0)

भारत राष्ट्रीय आन्दोलन के इतिहास में गांधी को सर्वोच्च स्थान दिया जाता है। भारत और विश्व में गांधी जी का नाम बड़े सम्मान और गौरव के साथ लिया जाता है। भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान उनकी सादगी और त्यागमय जीवन को देखकर उन्हें महात्मा के नाम से सम्बोंधित किया जाने लगा। भारत के पूर्व प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू उन्हें बापू के नाम से सम्बांधित करते थे। स्वतंत्र भारत में गांधी जी को राष्ट्रपिता के अलंकरण से सम्बोधित करके उन्हें सम्मान प्रदान किया गया। भारतीय राजनीतिक विचारों के इतिहास में गांधी को महात्मा बापू, राष्ट्रपिता जैसे सम्मानीय शब्दों से सम्बोंधित किया जाता है। गांधी के राजनीतिक विचारों को गांधीवाद की संज्ञा दी जाती है। गांधी ने मार्क्स, लेनिन, रूसो, मिल, बैंथम आदि विचारकों के समान किसी राजनीतिक सिद्वांत की स्थापना नहीं की है। उनका यह उद्देश्य भी नहीं था। उन्होंने यही राजनीतिक विचार दिए जो भारत की तत्कालीन परिस्थितियों में सुधार के लिए आवश्यक थे। उनके राजनीतिक विचारों का ज्ञान हमें उनके द्वारा लिखित विभिन्न पुस्तकों और लेखों से होता है, जो उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान लिखी। उनकी राजनीतिक कार्यशैली का ज्ञान हमें उन संवैधानिक विरोध के साधनों में मिलता है, जो उन्होंने ब्रिटिश शासन के विरूद्व अपनाए। वे गोपाल कृष्ण गोखले के शिष्य थे और उन्हीं के समान विरोध के अहिंसक और संवैधानिक साधनों में विश्वास करते थे।

गांधी जी की राजनीतिक विचारधारा गांधीवादी कहलाती है परन्तु गांधीवाद् क्या है ? इसका कोई निश्चित उत्तर नहीं दिया जा सकता, क्योंकि गांधी जी का कोई एक निश्चित मत या सम्प्रदाय नहीं था। वह जो सत्य समझते थे या अपनी आत्मा के अनुकूल समझते थे उसे ही अपने जीवन में अपनाते थे तथा उसे ही अन्य से अपनाने

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

का आग्रह करते थे। उनके विचारों को सभी धर्मों तथा वादों ने प्रभावित किया। उन्होंने अपने सामने आने वाली समस्याओं पर परिस्थिति के अनुसार चिन्तन कर अपने विचार व्यक्त किए। अतः विभिन्न अवसरों पर व्यक्त किए गए उनके विचारों में कही विरोधाभास भी है। इस कारण गांधीवाद की कोई निश्चित परिभाषा नही दी जा सकती। गांधी जी ने स्वयं लिखा है' कि ''गांधीवाद जैसी कोई वस्तु है ही नही और मुझे अपने पीछे कोई सम्प्रदाय नही छोड़ जाना है। मैंने कोई नया तत्व या सिद्वान्त खोज निकाला है, ऐसा मेरा दावा नही है। मैंने शाश्वत सत्यों को अपने नित्य के जीवन और प्रश्नों से सम्बंध करने का प्रयास अपने ढंग से किया है। सत्य और अहिंसा आदिकाल से चले जा रहे है। मैने केवल यथा संभव इनके प्रयोग किए है। आप लोग इसे गांधीवाद न कहें, इसमें वाद जैसा कुछ भी नही है।'' अतः गांधीवाद कोई सुव्यवस्थित दर्शन नही है परन्तु फिर भी हम गांधी जी के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक तथा नैतिक आर्दशों के समूह को गांधीवाद कह सकते है।

गांधी को राजनीति में एक कुशल बनिये की संज्ञा भी दी जाती है। इस रूप में, जैसे बनिया अपने ग्राहक को खाली हाथ नहीं जाने देता, वैसे ही गांधी भी अपने विरोधी से हमेशा विचार-विमर्श, तर्क वाद-विवाद करने को तत्पर रहते थे, जिससे कि वह उसकी बात समझ सके और अपनी उसे समझा सके और एक दूसरे की बात सुन व समझ कर एक ऐसे विकल्प और निष्कर्ष पर पहुंच जाये, जिसे स्वीकार करने के लिए न केवल उनकी अपनी, बल्कि उनके विरोधी को भी आत्मा गवाही दे। इसी रूप में, वह सत्याग्रह को एक ऐसा रास्ता मानते थे, जिनके द्वारा वह अपने विपक्षी का हृद्‌य परिवर्तन कर सके और इसके लिए वह अपनी आत्मा व तर्क का सहारा लेते थे, और ईश्वर से प्रार्थना करते थे कि वो उनके विपक्षी को भी सन्मति दे, जिससे कि वो भी अपने हठ छोड़कर आत्मा और विवेक का रास्ता अपना ले और जब तर्क और वाद-विवाद से काम नही चलता था, तो वे आत्मपीडन के लिए तैयार रहते थे।[1]

महात्मा गांधी एक साथ ही राजनीतिज्ञ और कृषक है और उनकी निर्भयता तथा आदर्शवादिता के कारण देश्वासी उन्हें देवता की भांति पूजते है। उनसे अनेक डरते है पर घृणा कोई नहीं करता। उनके असहयोग आन्दोलन को कलकत्ते की कांग्रेस में स्वीकार

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

कर देश ने इतिहास में अद्वितीय और अभूतपूर्व काम की तैयार की है। वह अदालतों के बहिष्कार और विदेशी वस्त्रों के त्याग का आदेश देते है। लड़कों और लडकियों को सरकारी पाठशालाओं से हटा लेना चाहते है और उन्होनें कौसिलों का त्याग कर दिया है जिनका अभी सुधार किया गया है।

'लराडन टाइम्स' के बम्बई के संवाददाता का मत है [2] कि ''कांग्रेस ने महात्मा गॉधी जी के सिद्वान्त को केवल इस कारण स्वीकार किया कि पंजाब की दुर्घटना से सबके दिल में घृणा के भाव उत्पन्न हो गये थें''। पर श्रीयुक्त समरथ का मत है कि रौलट एक्ट ने महात्मा गॉधी जी का रास्ता साफ कर दिया। भारतीय जनता की अवहेलना कर इस कानून को पास करने में भारत सरकार ने भारी भूल की है।

महात्मा गॉधी के राजनीतिक विचारों की सबसे महत्वपूर्ण देन उनका राजनीति और धर्म के बीच अटूट सम्बंध स्थापित करना है। गांधी जी धर्म और राजनीति को दो अलग वस्तुएं नहीं मानते थें। उनके अनुसार राजनीति और धर्म का वही सम्बंध है जो शरीर और आत्मा का है। उन्होनें धर्म की खातिर राजनीति में प्रवेश किया। उन्होने राजनीति को उठा कर निःस्वार्थ लोक सेवा ओर नैतिकता के स्तर पर रखा। उन्होंने राजनीति का आध्यात्मीकरण किया।

गॉधी जी का मत था [3] कि , ''जो लोग कहते है कि धर्म का राजनीति से कोई संबंध नही है, वे नही जानते कि धर्म का क्या अर्थ है। मेरे लिए धर्म के बिना कोई राजनीति नहीं है। धर्म रहित राजनीति मृत्यु का फंदा है। परन्तु धर्म से उनका अभिप्राय किसी विशेष धर्म या मत से नही है। उनका ईश्वर सत्य,प्रेम ओर अहिंसा है और यही उनका धर्म है। गांधी जी के अनुसार राजनीति धर्म और नैतिकता की एक शाखा है। उन्होंने राजनीति को कभी शक्ति प्राप्त करने का संघर्ष नहीं माना। उनका मत था कि राजनीति तो लाखो पददलित लोगो के जीवन को ऊपर उठाने, मानवीय गुणों का विकास करने, लोगों की सच्ची स्वतंत्रता, सामाजिक समानता और बंधुत्व के बारे में प्रशिक्षित करने का निरंतर प्रयत्न है। जो राजनीतिज्ञ इन उद्वेश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करता है, वह धार्मिक हुए बिना नहीं रह सकता। गांधी जी के अनुसार राजनीति मे ंप्रवेश करने का अर्थ सच्चाई और न्याय प्राप्त करने की दिशा में आगे बढना था।

गांधी जी के राजनीतिक विचारों में दार्शनिक अराजकता के तत्व भी उपस्थित है। गांधी जी ने राज्य की आत्महीन यंत्र की संज्ञा दी है। उनके शब्दों में, " राज्य केंद्रित और संगठित रूप से हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है। व्यक्ति की आत्मा होती है, परन्तु राज्य आत्महीन यंत्र के समान है। इसे भी हिंसा से अलग नही किया जा सकता, क्योंकि इसकी उत्पत्ति हिंसा के माध्यम से होती है।" गांधी जी ऐतिहासिक, नैतिक और आर्थिक आधार पर राज्य का विरोध करते थें। इतिहास में ऐसा कोई उदाहरण नही मिलता, जिसमें राज्य ने गरीबों का साथ दिया हों। राज्य का आधार शक्ति है और उसके आदेशो का पालन बलपूर्वक कराया जाता है। इसलिए उनका कोई नैतिक आधार नही है। उसी कार्य को नैतिक कहा जा सकताा है जो व्यक्ति स्वेच्छा से करता है। राज्य मनुष्य के व्यक्तित्व को दबाता है, इसलिए यह आर्थिक प्रगति में बाधा उत्पन्न करता है। गांधी जी राज्य को पूर्ण रूप में समाप्त नही करना चाहते थें, परन्तु वे उसे इतनी शक्ति भी सौपना नही चाहते थें कि मनुष्य का व्यक्तित्व समाप्त कर दें।

गांधी जी के शब्दों में [4] राज्य अपने आप में सांध्य नहीं है बल्कि लोगो को अपने जीवन के हर क्षेत्र में परिस्थितियों को सुधारने का साधन है। गॉधी जी राज्य को सेवा राज्य चाहते थे। राज्य मनुष्य के जीवन को बेहतर बनाने के लिए अस्तित्व मे आया है, न कि मनुष्य राज्य को बेहतर बनाने के लिए उत्पन्न हुए है। राज्य पृथ्वी पर ईश्वर का अवतार नही है। यदि वह कोई गलती करता है तो मनुष्य को उसका अहिंसात्मक ढंग से विरोध करना चाहिए।

गांधी जी राज्य के कार्यो को सीमित रखना चाहते थें। व्यक्तिवादियों की भांति गांधी जी भी राज्य को एक आवश्यक बुराई मानते थे और उसको कम से कम कार्य सौंपना चाहते थें। थोरियों की भांति गांधी जी का विचार था [5] कि वह सरकार सबसे अच्छी है जो सबसे कम शासन करती है। गांधी जी राज्य की बढती हुई शक्तियों को शंका की दृष्टि से देखते थे। क्योंकि इससे व्यक्ति के व्यक्तित्व के दबने का खतरा बढ जाता है। उन्होनें कहा है, " मैं राज्य की बढती हुई शक्तियों को बडे डर से देखता हूॅं क्योंकि, यधपि यह बाहरी तौर पर शोषण को कम करके अच्छाई करता दिखाई देता है,

यह मनुष्य के व्यक्तित्व को नष्ट करके जो कि सभी प्रगति की जड है, मानव जाति को अधिक हानि पहुंचाता है।''

गांधी जी ऐसे लोकतंत्र के समर्थक थे। जिसमें शक्तियों का पूर्ण विकेन्द्रीकरण हो। उनका मत था [6] राज्य में '' जितना अधिक विकेन्द्रीकरण होगा, वह उतना ही अधिक लोकतंत्र होगा।'' सच्चा लोकतंत्र विकेन्द्रीकृत लोकतंत्र होता है। केन्द्रीयकरण मनुष्य के साहस, कार्य, कुशलता, क्रियाशीलता और कल्पना शक्ति को नष्ट कर देता है। वह स्वशासन के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न करता है। इसलिए राज्य में सभी स्तरों पर शक्तियों को विकेन्द्रीकरण होना चाहिए।

गांधी जी उदार राष्ट्रवाद के समर्थक थे। वह राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता मे कोई विरोध नही मानते थे। गांधी जी संकीर्ण राष्ट्रवाद में विश्वास नहीं रखते थे। वे हिंसात्मक और आक्रमणकारी राष्ट्रवाद के विरोधी थे। वे विश्व शांति और विश्व बंधुत्व के समर्थक थे तथा राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता में सामंजस्य स्थापित करना चाहते थे। उनका मत था [7] कि लोगों को देशभक्त भी होना चाहिए, परन्तु साथ ही दूसरे देशो के लोगो के प्रति सदभावना रखनी चाहिए। वे कहते थे, '' मेरी देशभक्ति संकुचित नहीं है। मैं किसी अन्य राष्ट्र को कोई हानि नहीं पहॅुचाना चाहता। मैं भारत वर्ष का उत्थान चाहता हॅू तांकि विश्व को उससे लाभ पहॅुच सके। मैं भारत का दूसरे राष्ट्रों के नाश पर उत्थान नही चाहता। मैं उस देश भक्ति को अस्वीकार करता हॅू जो दूसरी राष्ट्रीयताओं के शोषण करने के लिए उत्साहित करती है।''

अल्बर्ट आईन्स्टाइन ने महात्मा गांधी के संबंध में लिखा है [8]–'' वह अपने देशवासियों के ऐसा नेता है, जिन्हे किसी भी बाहृ सत्ता की सहायता उपलब्ध नहीं है। वह ऐसे राजनीतिज्ञ है जिनकी सफलता किसी युक्ति पर नही, किसी तकनीकि पद्वति की पूर्ण जानकारी पर है। जिन्होने सदा ही बल प्रयोग का तिरस्कार किया है, वह ऐसे विवेकशील और नम्र व्यक्ति है, जिनमें संकल्प शक्ति है और अपने आदर्शो के प्रति अनन्य दृढता है और जिन्होनें अपनी पूरी ताकत अपने देशवासियों के उत्थान और उनकी हालत बेहतर बनाने में लगाई है। उन्होंनें यूरोपीय क्रूरता का सामना सीधे–सादे मनुष्य की सौम्यता से किया है और इस प्रकार अपने आपको उससे श्रेष्ठ स्तर पर

Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

बनाए रखा है। हो सकता है कि आने वाली पीढियां विश्वास न कर पायें कि उनके जैसा मानव इस धरती पर सशरीर उपस्थित था।''

गांधी जी राजनीति में धर्म अथवा सत्य का समावेश करते थे। उनकी यह बात अधिकांश पश्चिमी लोगों को ही नही अनेक भारतीय विचारको को भी बहुत अटपटी लगी थी, पर गांधी जी हटे नहीं। जब लोकमान्य तिलक का मत था [9] कि राजनीति साधुओ का खेल है। साधुओं से मेरा मतलब इस शब्द से सूचित अच्छे से अच्छे व्यक्ति से है।'' इसी प्रकार जब रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा कि '' धर्म की इस महान निधि का राजनीति की इस कमजोर नौका में जो दलबंदी की कुद्र लहरों से टकराती रहती है, मत रखे ''गांधी जी ने जबाव में लिखा [18] कि ''बिना धर्म के राजनीति एक मुर्दा है, जिसको सिवा जला देने के और कोई उपयोग नहीं हो सकता। गांधी जी के विचार से धर्म का अर्थ कटर पंथ में नही है। उसका अर्थ, विश्व की एक नैतिक सुव्यवस्था में श्रद्वा। समाज के प्रत्येक कारोबार में राजनीति के नीति–विहीन होने से मनुष्य का सारा जीवन व्यवहार ही अनीतिमय है, राजनीति को संजीने और साधुओं का काम न माने जाने से भले आदमी इसमें आने से बचते रहते है। वे अदालतों से धारा–सभाओं से ओर सरकारी पदों से दूर–दूर रहते है। यदि राजनीति सुधर जाये, या नैतिकता–युक्त हो जाये तो हमारे सार्वजनिक क्षेत्र की गंदगी हट जाए। गांधी जी इस महान क्रान्ति का श्रीगणेश कर दिया। उनके विचारों और कार्यो का सुप्रभाव सभी सार्वजनिक अंगो पर विलक्षण रूप से पडा।

राजनीतिक शक्ति के बारे में गांधी का मत था–[10] राजनीतिक शक्ति का इससे अधिक कुछ भी महत्व नही है कि वह एक जरिया है, जिससे लोग अपने जीवन की अवस्थाओं को सुधार सकते है। राजनीतिक शक्ति का अर्थ है राष्ट्रीय प्रतिनिधियों द्वारा राष्ट्रीय जीवन का संचालन। अगर राष्ट्रीय जीवन स्वयं संचालन की योग्यता हासिल कर लेता है जो प्रतिनिधित्व की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती। ऐसे राज्य में हर व्यक्ति अपना शासक है। वह अपना शासन इस प्रकार करता है कि पडौसी को उससे कोई अडचन न पहुंचे। इसलिए आदर्श राज्य में राजनीतिक शक्ति नाम की कोई चीज

नहीं रह पाती, क्योंकि राज्य ही नहीं रह जाता। परन्तु यह आदर्श जीवन में पूरी तरह से प्राप्त नही है।

गांधी दार्शनिक अराजकतावादी थे फिर भी राज्य में और राज्य के द्वारा प्रयोग मे लाई जाने वाली राजनीतिक शक्ति में उनका विश्वास था। परन्तु उन्होनें सदा ही राज्य ओर समाज में भेद करने का प्रयत्न किया। पश्चिमी राजनीतिज्ञ जब कि मनुष्यों के राजनीतिक और अराजनीतिक इन दो वर्गो में बांटते है, और राजनीतिक मनुष्य का मूल्यांकन भी इस आधार पर करते है कि वह शक्तिशाली है, अथवा शक्ति प्राप्त करने में प्रयत्नशील अथवा निःशक्त। गांधी का विश्वास था कि समाज में जितने भी व्यक्ति है उन सबका राजनीतिक शक्ति में हिस्सा बांटने का केवल अधिकार ही नही कर्तव्य भी है। पर साथ ही वह यह मानते थें कि कुछ व्यक्तियों के लिए, जिन्होने सत्याग्रह की तकनीक में प्रशिक्षण प्राप्त कर लिया है, यह आवश्यक होना चाहिए कि वे अपने को राजनीतिक शक्ति से दूर रखे और सदा इस प्रयत्न में लगे रहे कि राज्य सत्ता को समाज के प्रति उत्तरदायी बनाये रखा जा सके। देश में रचनात्मक कार्यो के लिए उन्होनें जो अनेक संगठन बनाये थें, उनके कार्यकर्ताओं के सम्बन्ध में गांधी ने स्पष्ट किया कि [11] ''वह उन्हे संसद में भेजना नही चाहते। वह चाहते थे कि मतदाताओं को प्रशिक्षण और निर्देशन देकर ताकि वह संसद को नियंत्रण में रख सकें।''

गांधी जी का राज्य के प्रति दृष्टिकोण अराजकतावादी का सा था। राज्य के प्रति जो गांधी जी के विचार है, उन पर पाश्चात्य विद्वान टालस्टाय की छाया देखने को मिलती है उनक मत था कि राज्य एक अनावश्यक बुराई है। यह ऐतिहासिक, दार्शनिक, धार्मिक, नैतिक, आर्थिक, आदि सभी दृष्टिकोणो से महत्वहीन है क्योंकि यह मानव की नैतिकता पर आघात करता है तथा राज्य के कारण मानव स्वेच्छा से तथा स्वतः कार्य नही कर सकता। उनके मतानुसार राज्य हिंसा का प्रयोग करता है। वह जनता का शोषण करता है तथा नागरिकों की नैतिकता का हनन करता है। गांधी जी का मत है [12] ''राज्य केन्द्रित तथा व्यस्थित हिंसा का प्रतिनिधित्व करता है।'' राज्य आत्माहीन है जबकि व्यक्ति सचेतन आत्वान है। उसे हिंसा से अलग नही किया जा सकता, क्योंकि इसकी उत्पत्ति ही हिंसा से हुई है। उनका कहना था कि, ''मैं राज्य की बढती हुई शक्ति

International Journal of Research in Social Sciences
Vol. 7 Issue 7, July 2017,
ISSN: 2249-2496 Impact Factor: 7.081
Journal Homepage: http://www.ijmra.us, Email: editorijmie@gmail.com
Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International Journal - Included in the International Serial Directories Indexed & Listed at: Ulrich's Periodicals Directory ©, U.S.A., Open J-Gate as well as in Cabell's Directories of Publishing Opportunities, U.S.A

से बहुत भयभीत होता हूँ क्योंकि, यधपि शोषण के कम करने से प्रकट रूप से अच्छा कार्य करती है, परन्तु व्यक्तित्व का नाश कर जनता को अधिक हानि पहुंचाती है। हम ऐसी बहुत सी घटनाएं जानते है जहां जनता ने संरक्षता को अपना लिया हो परन्तु ऐसी कोई घटना नही जानते जहां राज्य गरीबों के लिए सहायक हो रहा है। [13]

राजनीतिक आन्दोलन में गांधी ने स्वावलम्बन तथा जनकल्याण को प्राथमिकता दी। मूलतः इस कार्यक्रम के औचित्य को नकारा नही जा सकता। किन्तु संस्थात्मक प्रयासों तथा सत्याग्रही की सनातन वचनबद्धता के अभाव में क्रियान्वित तथा प्रभावी अपेक्षापूर्ति के प्रति सर्वप्रथम शंका होनी स्वाभाविक है। समाज में व्यापक वर्ग-भेद की स्थिति के संदर्भ में विशेष रूप से, किसी भी कार्यक्रम की व्यावहारिक सफलता, चाहे आंशकि ही हो, यदि वर्ग विशेष के हितों से टकराती है तो स्वाभाविक है कि ऐसे कार्यक्रम के क्रियान्वयन में ये वर्ग सशवत् गतिरोध उत्पन्न करते है। भारतीय संदर्भ में भी ऐसा ही देखा गया। समाज, धर्म, अर्थतंत्र एवं व्यावसायिक क्षेत्र की विशिष्ट वर्ग किसी ऐसे कार्यक्रम को यदि वास्तविक समर्थन दे, तो स्वयं उनके निहित स्वार्थो पर आघात होना स्वाभाविक होगा। फलतः इस प्रकार के तत्वों ने गांधी के अन्य साधनों की भांति, रचनात्मक कार्यक्रम की क्रियान्वित में प्रत्यक्ष, अप्रत्यक्ष गतिरोध उत्पन्न किये। सत्याग्रह के आधार पर इस चुनौती का सशक्त प्रत्युत्तर एंव निदान देने में सफल नही रहे।

गांधी जी राज्य के तत्कालीन स्वरूप के विरोधी थे। वे राज्य को हिंसा पर आधारित मानते थे। यही कारण है कि गांधी को एक अराजकतावादी विचारक कहा जाता है। क्योंकि उनके राज्य के संबंध में विचार नकारात्मक थे। राज्य के संबंध में उनका मत था [14] कि,'' मैं राज्य को बहुत डर से देखता हूॅं। राज्य बाहर से तो शोषण को कम करके भलाई का काम करता दिखता है। परन्तु अन्दर से वह उस व्यक्ति का नाश करता है जिसकी वह उन्नति का आधार है।''

गांधी जी का विचार था कि उद्देश्य की प्राप्ति के लिए उचित, संवैधानिक, नैतिक एंव पवित्र साधनो का प्रयोग करना चाहिए। वे इसमें विश्वास करते थे कि साधनों की अपवित्रता अच्छे से अच्छे उद्देश्य को नष्ट कर देती है। उनका मत था कि तलवार की

नोंक पर प्राप्त की गई वस्तु स्थायी नहीं होती। उनका इस युक्ति में विश्वास नहीं था कि '' उद्देश्यों की प्राप्ति साधनों को औचित्य प्रदान करती है।'' गांधी का विश्वास इसमें था कि हमें न केवल आदर्श उद्देश्य को निश्चित करना चाहिए, अपितु उसे प्राप्त करने के लिए हमारे साधन भी आदर्श होने चाहिए। उनका मत था कि ''साधन ही उद्देश्य को औचित्व प्रदान करते है।'' यदि हमारे साधन पवित्र नहीं होगे तो हमारा उद्देश्य कितना ही उच्च क्यों नह हो, वह भी अपवित्र हो जाएगा। गांधी के विचारों में यदि साधन बीज है तो उद्देश्य उसे प्राप्त होने वाला फल है। यदि हम उत्तम बीज का प्रयोग नहीं करेगे तो हमे उत्तम फल भी प्राप्त नही होगा।[15]

एक विचारक आन्दोलकर्ता और कुशल राजनीतिज्ञ के रूप में गांधी को सत्य और अहिंसा का पुजारी माना गया है। सत्य रूपी ईश्वर की आराधना, सत्य के रास्ते पर चलना और समस्याओं का अहिंसा के द्वारा निदान करना, गांधी की जीवन शैली का अभिन्न अंगा था। गांधी की विचारधारा, जीवन और व्यक्तित्व के संबंध में जितनी और संज्ञाओं का प्रयोग किया गया है, उनमें से कुछ को छोडा भी जा सकता है, लेकिन उनकी छवि सत्य और अहिंसा के पुजारी के रूप में, एक ऐसी छवि के जो उनको एक ऐसा राजनैतिक चिन्तक बनाती है, जिसकी आधुनिक काल में कोई और मिसाल नहीं मिलती।

संदर्भ

1. डॉ. रामरतन, डॉ. शारदा शोभिका, महात्मा गांधी की राजनैतिक अवधारणायें, कालिंग पब्लिकेशन, दिल्ली, 1992, पृ. 05
2. चारू सपरा, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, साहनी पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 2008, पृ. 64
3. विश्व प्रकाश गुप्त, मोहिनी गुप्त, महात्मा गांधी व्यक्ति और विचार, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1996, पृ. 148
4. महादेव प्रसाद, महात्मा गांधी का समाज दर्शन, हरियाणा हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, चंडीगढ, 1973, पृ. 73
5. वही,

6. ज्ञानेनद्र रावत, महामानव महात्मा गांधी एवं विमर्श, श्री नटराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008 पृ. 16
7. डॉ. शेफाली बाथौनिया, महात्मा गांधी एवं विश्व, ए.बी.डी. पब्लिशर्स, जयपुर, 2008 पृ. 159
8. मनोज कुमार झा, हिन्दू–मुस्लिम एकता और गांधी एक अध्ययन, सन्मार्ग प्रकाशन, दिल्ली, 1990, पृ. 68
9. पत्तुराम, गांधी बनाम राजनीति, सर्वोदय साहित्य संसद, लखनऊ, 1959 पृ. 14
10. राजेश कुमार शर्मा, आशा कौशिक, गांधी नयी सदी के लिए, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर एवं नई दिल्ली, 2000, पृ. 231
11. बलराम नंदा, गांधी और उनके आलोचक, सारांश प्रकाशन प्रा. लि. दिल्ली, 1997 पृ. 89
12. डॉ. एस. के. रूस्तगी डॉ. पी.सी. जैन, आधुनिक भारतीय राजनीतिक एवं सामाजिक चिन्तन, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली 2005, पृ. 345
13. वहीं पृ. 345
14. के.एम. भनोट, राजनीतिक चिन्तन, लक्ष्मी बुड डिपो, भिवानी, 2004, पृ. 477
15. डॉ. राम रतन, डॉ. शारदा शोभिका, महात्मा गांधी की राजनैतिक अवधारणायें, कलिंग पब्लिकेशन दिल्ली, 1992 पृ. 07